प्रकाशन के लिए अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

विविध याचिका (दांडिक) क्रमांक 280/2008

आवेदक:

1. रामेश्वर, पिता हीरालाल, उम्र लगभग 23 वर्ष,
2. इन्द्रमन पिता बुद्धू राम उम्र लगभग 37 वर्ष,
3. हीरा लाल, पिता बुद्धू राम, उम्र 40 वर्ष,
4. रामविशाल,पिता दीवान राम, उम्र लगभग 35 वर्ष,

सभी निवासी ग्राम बांसपारा, चौकी बसदेई,
थाना एवं तहसील सूरजपुर, जिला सरगुजा (छ.ग.)

5. बसंतराम, पिता मानसाय, उम्र लगभग उम्र 37 वर्ष, निवासी ग्राम शिवपुर, चौकी बसदेई, थाना एवं तहसील सूरजपुर, जिला सरगुजा (छ.ग.)
6. रघुबर, पिता गिरधारी, उम्र लगभग 55 वर्ष, निवासी ग्राम तुलबुल, थाना रामानुजनगर, तहसील सूरजपुर, जिला सरगुजा (छ.ग.)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

बनाम

अनावेदक

राजेश्वर प्रसाद, पिता प्रभुराम साहू (पुरूषोत्तम का कथित दत्तक पुत्र),उम्र लगभग 25 वर्ष, निवासी ग्राम खाड़ा, थाना पटना, तहसील बैकुंठपुर, जिला. कोरिया (छ.ग.)

{दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अंतर्गत आवेदन}

उपस्थित:

श्रीमती मीना शास्त्री, याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता।

श्री अशोक कुमार शुक्ला, उत्तरवादी के अधिवक्ता ।

<u>एकल पीठ: माननीय श्री टी.पी. शर्मा, न्यायमूर्ति</u>

<u>मौखिक आदेश</u>

(दिनांक 11-9-2009)

1. यह याचिका, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 482 के अंतर्गत है, जिसमें न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, सूरजपुर के न्यायालय में लंबित दांडिक कार्यवाही को रद्द करने का अनुरोध किया गया है। दांडिक परिवाद प्रकरण क्रमांक 364/2004, जो उत्तरवादी के आग्रह पर याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 419, 420, 205, 471, 465, 467, 468, 294, 506 ख और 323 के अंतर्गत दंडनीय अपराध के लिए प्रस्तुत किया गया था।

2. दांडिक कार्यवाही को इस आधार पर रद्द करने का अनुरोध किया गया है कि यहाँ शिकायतकर्ता/उत्तरवादी के कथित पिता ने उन्हीं तथ्यों के आधार पर वर्ष 1998 में एक सिविल वाद दायर किया था और बिक्री विलेख के कथित निष्पादन की तिथि से तीन वर्ष से अधिक समय बीत जाने के बाद, यहाँ याचिकाकर्ताओं द्वारा मृतक पुरुषोत्तम के विरुद्ध वर्ष 1998 में किए गए कृत्य से संबंधित आपराधिक शिकायत दर्ज करना, न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग मात्र है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. इस याचिका का आधार व संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि पुरुषोत्तम (अब मृत) ने वर्ष 1998 में याचिकाकर्ताओं और अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध स्वामित्व की घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए सिविल वाद दायर किया था, जिसमें यह दलील दी गई है कि यहाँ याचिकाकर्ताओं ने कूट रचना करके और किसी फर्जी व्यक्ति को पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत करके अपनी भूमि का दिनांक 25-9-97 का बिक्री विलेख निष्पादित करवाया है, जिसका यहाँ याचिकाकर्ताओं द्वारा विशेष रूप से खंडन किया गया है। उत्तरवादी के वाद के अनुसार, दिनांक 3-4-2000 को पुरुषोत्तम ने शिकायतकर्ता/उत्तरवादी के पक्ष में वसीयतनामा निष्पादित किया था। पुरुषोत्तम की मृत्यु के बाद, याचिकाकर्ताओं और दो अन्य के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 419, 420, 205, 471, 128, 465, 467, 468, 294, 506 ख, 323 और पंजीकरण अधिनियम की धारा 82 के तहत दंडनीय अपराध के लिए वर्तमान शिकायत दर्ज की गई थी। संहिता के अध्याय-XV के अंतर्गत विवेचना करने के बाद, विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी ने दिनांक 6-5-2002 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 419, 420, 205, 471, 465, 467, 468, 294, 506 ख और 323 के अंतर्गत दंडनीय अपराध के संबंध में मामला दर्ज किया। आदेशिका (नोटिस) जारी कर दी गई, याचिकाकर्ताओं ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है और यह याचिका इस आधार पर दायर की है कि प्रथम दृष्टया, एक सिविल वाद दायर किया गया है और ऐसे सिविल वाद के लंबित रहने के

दौरान, किसी भी स्वीकृत तथ्य के अभाव में, दांडिक कार्यवाही स्वीकार्य नहीं है और यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

4. मैंने सभी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

5. याचिकाकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार ढंग से तर्क दिया कि स्वीकृत तथ्यों के मामले में सिविल और दांडिक कार्यवाही शुरू की जा सकती है, लेकिन यदि तथ्य विवादित हैं, तो दांडिक कार्यवाही पोषणीय नहीं है और पक्षकारों के लिए आवश्यक है की सिविल न्यायालय के समक्ष सिविल उपचारो का लाभ उठाये । इस मामले में, पक्षकार पहले से ही सिविल उपचारों का लाभ उठा रहे हैं और कथित अपराध मृतक पुरूषोत्तम के विरुद्ध है, उत्तरवादी के विरुद्ध नहीं, इसलिए, उत्तरवादी/शिकायतकर्ता पीड़ित व्यक्ति नहीं है और वह याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज करने या संज्ञान लेने के लिए शिकायत दर्ज करने के लिए सक्षम नहीं है। अधिकांश अपराध तीन वर्ष के कारावास से दंडनीय हैं, इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 467 और 468 के तहत अपराध को छोड़कर, तीन वर्ष की अवधि बीत जाने के बाद संज्ञान लेना संहिता की धारा 468 के अनुसार वर्जित है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दी कि शिकायत में अपराध के होने का खुलासा नहीं किया गया है और शिकायतकर्ता और उसके गवाहों के बयानों से अपराध के होने का स्पष्ट खुलासा नहीं होता। विद्वान अधिवक्ता ने **बी. सुरेश यादव बनाम शरीफा बी एवं अन्य(2008 क्रि.एल.जे.431)** के मामले का अवलंब लिया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि शिकायतकर्ता द्वारा सिविल और दांडिक कार्यवाही में लिया गया विपरीत रुख स्वीकार्य नहीं है, हालाँकि किसी व्यक्ति का दायित्व एक ही समय में सिविल और दांडिक दोनों हो सकता है, लेकिन शिकायतकर्ता द्वारा लिया गया असंगत रुख महत्वपूर्ण हो जाता है और इस असंगत रुख को ध्यान में रखते हुए, दांडिक कार्यवाही को रद्द किया जाना आवश्यक है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि याचिकाकर्ताओं ने शिकायतकर्ता को धोखा नहीं दिया है और उन्होंने कूटरचना का कोई अपराध नहीं किया है। सबसे महत्वपूर्ण सामग्री दस्तावेज, अर्थात कथित कूटरचित बिक्री विलेख, संज्ञान लेते समय शिकायतकर्ता द्वारा दांडिक न्यायालय में दायर नहीं किया गया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. इसके विपरित, उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता ने याचिका का आक्षेप किया और तर्क दिया कि संज्ञान लेते समय अधीनस्थ न्यायालय को अभियुक्तों के विरुद्ध संज्ञान लेने और कार्यवाही शुरू करने के लिए प्रथम दृष्टया तथ्यों को देखने की आवश्यकता है। संज्ञान लेते समय, साक्ष्यों की गहन विवेचना या सभी साक्ष्य प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है। यदि तथ्यों से दांडिक उत्तरदायित्व और सिविल उत्तरदायित्व उत्पन्न होते हैं, तो पक्षकार सक्षम रूप से सिविल और दांडिक कार्यवाही एक साथ शुरू कर सकते हैं। विद्वान अधिवक्ता ने ***मेसर्स इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन बनाम मेसर्स एनईपीसी इंडिया लिमिटेड एवं अन्य (2006 एआईआर एससीडब्ल्यू 3830)*** के मामले का अवलंब लिया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने

माना है कि तथ्यों के आधार पर यदि दांडिक और सिविल उत्तरदायित्व उत्पन्न होते हैं, तो पक्षों के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही और सिविल कार्यवाही शुरू की जा सकती है और दांडिक कार्यवाही रद्द नहीं की जा सकती।

1. यह संहिता की धारा 482 के तहत संज्ञान लेने के आदेश के विरुद्ध और दांडिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए एक याचिका है। संहिता की धारा 482 के अनुसार हस्तक्षेप का दायरा सीमित है। संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति असाधारण प्रकृति की है और इसका उपयोग संयम से किया जाना चाहिए। संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति के प्रयोग के दौरान ***मेसर्स झंडू फार्मास्युटिकलवर्क्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम मोहम्मद शराफुल हक एवं अन्य(एआईआर 2005 एससी 9)*** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया है,

> "8. इस प्रकार की प्रकृति वाले मामले में संहिता की धारा 482 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग अपवाद है, नियम नहीं। यह धारा उच्च न्यायालय को कोई नई शक्तियाँ प्रदान नहीं करती। यह केवल उस अंतर्निहित शक्ति को सुरक्षित रखती है जो संहिता के अधिनियमित होने से पहले न्यायालय के पास थी। यह तीन परिस्थितियों की परिकल्पना करती है जिनके अंतर्गत अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया जा सकता है, अर्थात्, (i) संहिता के अंतर्गत किसी आदेश को प्रभावी बनाने के लिए, (ii) न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, और (iii) अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए। अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र के प्रयोग को नियंत्रित करने वाला कोई भी कठोर नियम निर्धारित करना न तो संभव है और न ही वांछनीय। प्रक्रिया से संबंधित कोई भी विधायी अधिनियम उन सभी मामलों के लिए प्रावधान नहीं कर सकता जो संभवतः उत्पन्न हो सकते हैं। इसलिए, न्यायालयों के पास विधि के स्पष्ट प्रावधानों के अलावा अंतर्निहित शक्तियाँ हैं जो उचित निर्वहन के लिए आवश्यक हैं। विधि द्वारा उन पर लगाए गए कार्यों और कर्तव्यों का।यही वह सिद्धांत है जो इस धारा में अभिव्यक्त होता है जो केवल उच्च न्यायालयों की अंतर्निहित शक्तियों को मान्यता देता है और उनका संरक्षण करता है। सभी न्यायालय, चाहे सिविल हों या दांडिक , किसी स्पष्ट प्रावधान के अभाव में, अपने संविधान में निहित रूप में, न्याय प्रशासन के दौरान सही करने और गलत को पूर्ववत करने के लिए आवश्यक सभी शक्तियाँ रखते हैं।"क्वांडो लेक्स अलिक्विड अलिकुई कॉन्सेडिट, कॉन्सेडेरे विडेटुर एट आईडी सिने क्वो रेस इप्से एसे नॉन पोटेस्ट" (जब विधि किसी व्यक्ति को कुछ देता है, तो वह उसे वह देता है जिसके बिना वह अस्तित्व में नहीं रह सकता) के सिद्धांत पर। इस धारा के तहत शक्तियों का प्रयोग करते समय, न्यायालय अपील या पुनरीक्षण न्यायालय के रूप में कार्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

नहीं करता है। इस धारा के तहत अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र यद्यपि व्यापक है, इसका प्रयोग संयम से, सावधानीपूर्वक और सर्तकता से किया जाना चाहिए और केवल तभी जब ऐसा प्रयोग धारा में ही विशेष रूप से निर्धारित परीक्षणों द्वारा उचित ठहराया गया हो। वास्तविक और सारभूत न्याय करने के लिए एक्स डेबिटो जस्टिसिया का प्रयोग किया जाना चाहिए जिसके प्रशासन के लिए ही न्यायालय मौजूद हैं। न्यायालय का अधिकार न्याय को आगे बढ़ाने के लिए है और यदि उस अधिकार का दुरुपयोग करने का कोई प्रयास किया जाता है जिससे अन्याय उत्पन्न हो, तो न्यायालय के पास दुरुपयोग को रोकने की शक्ति है। न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग माना जाएगा किसी भी ऐसी कार्रवाई की अनुमति देना जिससे अन्याय हो और न्याय को बढ़ावा देने में बाधा उत्पन्न हो। शक्तियों का प्रयोग करते हुए, न्यायालय किसी भी कार्यवाही को रद्द करने के लिए न्यायोचित होगा यदि उसे लगता है कि इसकी शुरुआत/जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है या इन कार्यवाहियों को रद्द करने से अन्यथा न्याय का उद्देश्य पूरा नहीं होगा। जब शिकायत से कोई अपराध प्रकट नहीं होता है, तो न्यायालय तथ्य के प्रश्न की जांच कर सकता है। जब किसी शिकायत को रद्द करने की मांग की जाती है, तो यह आकलन करने के लिए सामग्री की जांच करने की अनुमति है कि शिकायतकर्ता ने क्या आरोप लगाया है और क्या कोई अपराध बनता है, भले ही आरोपों को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जाए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

7. शिकायत के आधार पर संज्ञान लेते समय, न्यायालय को यह देखना होगा कि यदि शिकायत में लगाए गए आरोप को उसके मूल स्वरूप में स्वीकार किया जाता है, तो यह अभियुक्त को दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त होगा, और फिर दांडिक कार्यवाही शुरू की जा सकती है।

8. वर्तमान मामले में, उत्तरवादी द्वारा याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध शिकायत दर्ज की गई थी। संहिता की धारा 468 में परिसीमा अवधि समाप्त होने के बाद संज्ञान लेने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है, जो इस प्रकार है:-

"468. परिसीमा-काल की समाप्ति के पश्चात संज्ञान का वर्जन—

(1) इस संहिता में अन्यथा ऐसा अन्यथा उपबंधित है उसके निषेध, कोई न्यायालय उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट प्रकार के किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा-काल की समाप्ति के पश्चात नहीं करेगा।

(2) परिसीमा-काल—

(क) **छः मास होगा**, यदि अपराध केवल जुर्माने से दंडनीय है;

(ख) **एक वर्ष होगा**, यदि अपराध एक वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है;

(ग) **तीन वर्ष होगा**, यदि अपराध एक वर्ष से अधिक किन्तु तीन वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है।

(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए उन अपराधों के संबंध में, जिनका एक साथ विचारण किया जा सकता है, परिसीमा-काल उस अपराध के दृष्टिकोण से अवधारित किया जाएगा जो, यथास्थिति, कठोरतर या कठोरतम दंड से दंडनीय है।"

9. संहिता की धारा 468 की उप-धारा (3) उन अपराधों के मामलों में संज्ञान लेने की समय-सीमा प्रदान करती है, जिनका एक साथ विचारण किया जा सकता है। जिन अपराधों पर एक साथ विचारण किया जा सकता है उनमें अधिक कठोर दंड संज्ञान लेने का निर्णायक कारक होगा। संहिता की धारा 468 की उप-धारा (3) के प्रावधान के आलोक में, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा संज्ञान लेने की समय-सीमा के प्रश्न से संबंधित प्रस्तुत तर्क का कोई महत्व नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध शुरू की गई दांडिक कार्यवाही की पोषणीयता के संबंध में, जैसा कि **बी. सुरेश (पूर्वोक्त)** के मामले में माना गया है, शिकायतकर्ता द्वारा लिया गया असंगत रुख महत्वपूर्ण हो जाता है और दांडिक कार्यवाही को रद्द किया जा सकता है। उक्त निर्णय के पैरा 12, 13 और 14 इस प्रकार हैं,

"**12**. विक्रय विलेख निष्पादित करते समय, अपीलकर्ता ने यहाँ कोई झूठा या भ्रामक अभ्यावेदन नहीं किया। साथ ही, उसकी ओर से कोई भी बेईमानीपूर्ण कार्य नहीं किया गया था जिससे उसे ऐसा कुछ करने या न करने के लिए प्रेरित किया गया हो जो वह नहीं कर सकता था या न करने से चूक सकता था यदि उसे धोखा न दिया गया होता। निस्संदेह, मामला एक सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष लंबित है। इस संबंध में एक सक्षम न्यायालय का निर्णय लिया जाना आवश्यक है।अनिवार्य रूप से, पक्षों के बीच विवाद एक सिविल विवाद है।

13. छल के अपराध को स्थापित करने के उद्देश्य से, शिकायतकर्ता को यह दिखाना आवश्यक है कि अभियुक्त का वादा या अभ्यावेदन करते समय धोखाधड़ी या बेईमानी का इरादा था। इस प्रकार के मामले में, किसी लंबित सिविल वाद में किसी पक्ष द्वारा अपनाए गए रुख पर विचार करना विधिवत अनुमेय है। हम हालाँकि, मेरा यह अभिप्राय यह नहीं है कि किसी व्यक्ति का दायित्व एक ही समय में सिविल और दांडिक दोनों नहीं हो सकता। लेकिन जब किसी शिकायत याचिका में ऐसा रुख अपनाया गया हो जो उसके द्वारा सिविल वाद में अपनाए गए रुख के विपरीत या

असंगत हो, तो यह महत्वपूर्ण हो जाता है। यदि यह तथ्य, जैसा कि कथित है, हमारे समक्ष प्रस्तुत किया गया होता कि अपीलकर्ता ने उक्त दो कमरों को ध्वस्त करवाया और विक्रय विलेख के निष्पादन के समय उक्त तथ्य को छुपाया, तो मामला अलग हो सकता था। चूँकि विक्रय विलेख दिनांक 30.9.2005 को निष्पादित किया गया था और कथित ध्वस्त करने की कार्यवाही दिनांक 29.9.2005 को हुआ था, इसलिए यह अपेक्षित था किशिकायतकर्ता/प्रथम उत्तरवादी उपरोक्त वाद में अपने द्वारा दायर लिखित बयान में अपनी वास्तविक शिकायत प्रस्तुत करेंगी। उन्होंने, अपने ज्ञात कारणों से, ऐसा करने का विकल्प नहीं चुना।

14. इस मामले के इस दृष्टिकोण से, हम यह राय है कि यहाँ प्राप्त तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, दांडिक मामले को आगे बढ़ाने का कोई मामला नहीं बनता है।"

11. **बी. सुरेश (पूर्वोक्त)** के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि दांडिक और सिविल कार्यवाही एक साथ शुरू की जा सकती है, लेकिन असंगत रुख के आलोक में, दांडिक कार्यवाही रद्द की जा सकती है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12. इसी प्रश्न पर विचार करते हुए, **मेसर्स इंडियन ऑयल (पूर्वोक्त)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि दांडिक और सिविल कार्यवाही एक साथ शुरू करने या लागू करने पर कोई रोक नहीं है, उक्त निर्णय के कंडिका 10, 12 और 13 इस प्रकार हैं,

"10. इस मुद्दे पर विचार करते हुए, व्यावसायिक हलकों में विशुद्ध रूप से सिविल विवादों को दांडिक मामलों में बदलने की बढ़ती प्रवृत्ति पर ध्यान देना आवश्यक है। यह स्पष्ट रूप से इस प्रचलित धारणा के कारण है कि सिविल विधि के उपाय समय लेने वाले होते हैं और ऋणदाताओं/लेनदारों के हितों की पर्याप्त रक्षा नहीं करते। कई पारिवारिक विवादों में भी ऐसी प्रवृत्ति देखी जाती है, जिसके परिणामस्वरूप विवाह/परिवार अपूरणीय रूप से टूट जाते हैं। यह भी धारणा है कि यदि कोई व्यक्ति किसी तरह दांडिक वाद में फँस जाता है, तो उसके शीघ्र ही समझौते की संभावना होती है। ऐसे सिविल विवादों और दावों को, जिनमें कोई दांडिक अपराध शामिल नहीं है, दांडिक अभियोजन के माध्यम से दबाव डालकर निपटाने के किसी भी प्रयास की निंदा की जानी चाहिए और उसे हतोत्साहित किया जाना चाहिए। *जी. सागर सूरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2000 (2) एससीसी 636) में,* इस न्यायालय ने टिप्पणी की:

"यह देखा जाना चाहिए कि क्या किसी मामले को, जो मूलतः सिविल प्रकृति

का है, दांडिक अपराध का जामा पहना दिया गया है। दांडिक कार्यवाही विधि

> में उपलब्ध अन्य उपायों का संक्षेपण नहीं है। आदेशिका (नोटिस) जारी करने से पहले, फौजदारी न्यायालय को बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। अभियुक्त के लिए यह एक गंभीर मामला है। इस न्यायालय ने कुछ सिद्धांत निर्धारित किए हैं जिनके आधार पर उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना है। इस धारा के अंतर्गत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किसी भी न्यायालय द्वारा प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जाना चाहिए।"

जबकि किसी भी वैध कारण या शिकायत वाले व्यक्ति को दांडिक विधि में उपलब्ध उपायों का उपयोग करने से नहीं रोका जाना चाहिए, एक शिकायतकर्ता जो अभियोजन शुरू करता है या उस पर अड़ा रहता है, यह पूरी तरह जानते हुए कि दांडिक कार्यवाही अनुचित है और उसका उपाय केवल सिविल विधि में ही है, उसे ऐसी गलत दांडिक कार्यवाही के अंत में, विधि के अनुसार, स्वयं जवाबदेह बनाया जाना चाहिए। अनावश्यक अभियोजन और निर्दोष पक्षों के उत्पीड़न को रोकने के लिए अदालतों द्वारा उठाया जा सकने वाला एक सकारात्मक कदम यह है कि वे धारा 250 सीआरपीसी के तहत अपनी शक्ति का अधिक बार प्रयोग करें, जहाँ उन्हें शिकायतकर्ता की ओर से दुर्भावना, तुच्छता या गुप्त हेतुक का पता चलता है। चाहे जो भी हो।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12. उत्तरवादियों ने निस्संदेह यह कहा है कि उनका गिरवी रखे गए विमान या उसके किसी भी हिस्से को छल करने, बेईमानी से इधर-उधर करने या उसका दुरुपयोग करने का कोई आशय नहीं था। उन्होंने यह बताने का कष्ट किया है कि विमान अभी भी तैनात हैं। चेन्नई और कोयंबटूर हवाई अड्डों पर; वीटी-नेक के दो इंजन विमान से निकाले जाने के बावजूद, अभी भी मद्रास हवाई अड्डे पर पड़े हैं; वीटी-एनईजे के दो डार्ट 552 टीआर इंजन पूरी जांच /मरम्मत के उद्देश्य से अलग किए गए थे; उन्हें एक अन्य विमान (वीटी-एनईएच) में लगाया गया था, जिसे 'मेसर्स एयरक्राफ्ट फाइनेंसिंग एंड ट्रेडिंग बी.वी' से पट्टे पर लिया गया था और उक्त विमान (वीटी-एनईएच) को पट्टादाता ने उसके बकाया के लिए रोक रखा है; वीटी-एनईजे में (हटाए गए इंजनों के स्थान पर) लगाए जाने वाले दो इंजन, जब ओवरहालिंग के लिए मेसर्स हंटिंग एरोमोटिव, यू.के. को भेजे गए, तो उनके बिलों से संबंधित विवाद के कारण उन्हें रोक लिया गया; और उनके नियंत्रण से परे इन विशिष्ट परिस्थितियों में; उनके पीछे किसी अविश्वसनीय होने का आरोप नहीं लगाया जा सकता। लेकिन ये ऐसे बचाव हैं जिन्हें वाद के दौरान प्रस्तुत और विचार किया जाना होगा। वाद के दौरान उपलब्ध बचाव, या तथ्य/पहलू, बरी होने का कारण बन सकने वाले तथ्य, शिकायत

को शुरू में ही रद्द करने का आधार नहीं हैं। इस स्तर पर, हम केवल इस प्रश्न से चिंतित हैं कि शिकायत में दिए गए कथन दांडिक अपराध के तत्वों को स्पष्ट करते हैं या नहीं।

13. इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरवादियों के इस तर्क को खारिज करना उचित था कि कई सिविल कार्यवाहियों के लंबित होने के कारण दांडिक कार्यवाही रद्द कर दी जानी चाहिए।"

13. वर्तमान मामले में, संपत्ति के कथित वास्तविक मालिक, जिनके नाम पर दिनांक 25-09-1997 को विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था, उन्होंने वर्ष 1998 में सिविल वाद दायर किया था। उस वाद की वादपत्र के कंडिका 3 में यह विशेष रूप से आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ताओं ने किसी अन्य व्यक्ति के साथ षड्यंत्र कर, एक फर्जी व्यक्ति को प्रस्तुत करके विक्रय विलेख निष्पादित करा लिया।

वादपत्र के कंडिका 3 का इस प्रकार है:

> "यह कि प्रतिवादी क्रमांक 1 व 2 तथा 2 के पिता प्रतिवादी क्रमांक 3 प्रतिवादी क्रमांक 4 तथा 5 के साथ आपस में सांठगांठ कर वादी के स्वामित्व की भूमि का विक्रय पत्र किसी अन्य व्यक्ति को खड़ा कर वाद भूमि परि० "अ" का रजिस्टर्ड विक्रय-पत्र फर्जी बनाते हुए निष्पादित करा लिया है। जिसकी कोई जानकारी वादी को नहीं है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

14. याचिकाकर्ताओं द्वारा वादपत्र के कंडिका 3 के आरोप का विशेष रूप से खंडन किया गया है। पुरुषोत्तम की मृत्यु के बाद, उनके कथित दत्तक पुत्र ने शिकायत दर्ज कराई है जिसमें विशेष रूप से उल्लेख किया गया है कि याचिकाकर्ताओं ने उनके पिता के साथ छल, कपट और अन्य अपराध किए हैं। दांडिक कार्यवाही ऐसे व्यक्ति के कहने पर संज्ञान लेने पर कोई रोक नहीं लगाती है जो अभियुक्तों के कृत्य से सीधे तौर पर पीड़ित नहीं है, भले ही वर्तमान मामले में, उत्तरवादी वह व्यक्ति है जिसने दावा किया है कि वह मृतक पुरुषोत्तम का दत्तक पुत्र है और पुरुषोत्तम ने उसके पक्ष में वसीयत बनाई है। अधीनस्थ न्यायालय ने शिकायतकर्ता/उत्तरवादी की ओर से उसके समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर याचिकाकर्ताओं के खिलाफ संज्ञान लिया है जो संज्ञान लेने के लिए पर्याप्त है। संज्ञान लेते समय, दस्तावेज़ प्रस्तुत करना अनिवार्य नहीं है। कथित दस्तावेज़ सिविल वाद का विषय है।

15. यह सिविल वाद वर्ष 1998 में दस्तावेज़ के कथित निष्पादन के एक वर्ष के भीतर दायर किया गया था और मृतक पुरुषोत्तम ने अपनी वादपत्र में छल और कपट का आरोप लगाया है। शिकायतकर्ता ने छल और कपट से संबंधित ऐसा कुछ भी नहीं कहा है जो मृतक पुरुषोत्तम ने न कहा हो। अधीनस्थ न्यायालय ने गवाहों के बयानों के आधार पर संज्ञान लिया है। यदि शिकायत में लगाए गए आरोप और गवाहों के बयान याचिकाकर्ताओं द्वारा स्वीकार कर लिए जाते हैं, तो ये उनकी दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त हैं। याचिकाकर्ता

अपने खिलाफ दांडिक कार्यवाही को रद्द करने का मामला बनाने में पूरी तरह विफल रहे हैं। यहां तक कि याचिकाकर्ताओं ने अपनी याचिका में यह भी आरोप नहीं लगाया है कि वे अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष कब पेश हुए थे और दांडिक कार्यवाही में शामिल होने के कितने वर्षों बाद उन्होंने रद्द करने के लिए यह याचिका दायर की है। मुझे संहिता की धारा 482 के संदर्भ में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं दिखती। इसलिए, यह याचिका खारिज किए जाने योग्य है और इसे वाद व्यय 5,000/- रुपये के साथ शुरुआत में ही खारिज किया जाता है। यह वाद व्यय उत्तरवादी को देय होगी।

सही/-

टी.पी. शर्मा

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By Amitesh Anand Rathore